कालिदास की शकुंतला

* चित्रा सिंह

कनिष्ठिकाधिष्ठित कविकुलगुरु महाकवि कालिदास के अमर नाटक ''अभिज्ञानशाकुन्तलम'' की नायिका है – शकुंतला। यह नाटक विश्व की सर्वश्रेष्ठ रचनाओं में गिना जाता है। 7 अंको में समाप्य इस नाटक में हस्तिनापुर के महाराज दुष्यंत ओर महर्षि कण्व की पालिता पुत्री शकुंतला के प्रणय, विरह और पुनर्मिलन का कथानक गूंथा गया है। राजा दुष्यंत मृगया के लिये एक बार वन में जाते है, वहीं तपोवन में कण्व की पालिता कन्या शकुंतला को देखकर उसके प्रति प्रेमासक्त हो जाते है। उधर शकुंतला का हृदय भी दुष्यंत के लिये व्याकुल हो उठता हैं। महर्षि कण्व की अनुपस्थिति में ही दुष्यंत और शकुंतला गंधर्व विवाह कर लेते हैं। विवाह के पश्चात् शकुंतला को शीघ्र ही हस्तिनापुर बुलवाने का आश्वासन देकर दुष्यंत चला जाता है। किन्तु इससे पहले कि दुष्यंत शकुंतला को बुलाए, विधि उसके साथ एक छल कर बैठती है। अतिथि (ऋषि दुर्वासा) की अवमानना के कारण दुष्यंत शकुंतला को विस्मृत कर बैठता है। त्ताश्च, शकुंतला को आपन्नसत्वा जानकर ऋषि कण्व उसे स्वयं ही दुष्यंत के समीप भेजते हैं, किन्तु दुर्वासा शाप के कारण दुष्यंत उसका प्रत्याख्यान कर देता है। शाप निवृत्ति के पश्चात् दुष्यंत और शकुंतला का पुनर्मिलन होता है ओर दुष्यंत शकुंतला को अपनी अर्धांगिनी के रूप में स्वीकार करते हैं।

कालिदास तो प्रणय, वियोग और पुनर्मिलन की इस कथा को लिखकर काव्य जगत् में अमर हो गए, किन्तु शकुंतला को क्या मिला ? जन्म लेते ही माता–पिता द्वारा त्याग, तपोवन का कठिन जीवन, पति द्वारा तिरस्कार, राजदरबार में गुरुजनों के सम्मुख अपनमान और जगत की कटु पीड़ा ही उसके हिस्से में आई।

शकुंतला यद्यपि एक ऋषि और अप्सरा की पुत्री थी किन्तु जन्म लेते ही उसके माता–पिता ने उसे त्याग दिया और पक्षियों द्वारा उसका पालन किया गया, इसीलिये उसका नाम शकुंतला पड़ा। इसी कारण उसे तपोवन का कठोर और संघर्षमय जीवन जीना पड़ा, जिसकी वह अधिकारिणी नहीं थी। क्या वह उसके साथ अन्याय नहीं था ? यद्यपि दुष्यंत के साथ शकुंतला का प्रणय व्यापार तपोवन सदृश पावन भूमि में, गुरुजनों की अनुपस्थिति में अशिव और अशोभनीय था, किन्तु उसकी सजा केवल शकुंतला को ही क्यों मिली ?

राज्यसभा में दुष्यंत ने सभी के समक्ष उसका तिरस्कार और प्रत्याख्यान किया और यहां तक कि समस्त नारी जाति पर ही आरोप लगा दिया कि

अर्थात्

स्त्रियों के मध्य मानव जाति से भिन्न (पशु–पक्षी आदि योनि की) स्त्रियों में बिना सिखाए ही नैसर्गिक चतुरता दिखाई देती है, तो जो ज्ञानवती मानवी स्त्रियां है उनका तो कहना ही क्या ?

यद्यपि दुर्वासा शाप के कारण दुष्यंत शकुंतला को स्मरण नहीं कर पा रहा था, किन्तु दुर्वासा शाप का समस्त फल केवल शकुंतला को ही क्यों भोगना पड़ा ? एक बार के लिए यदि दुष्यंत की कटुक्तियों को दुर्वासा शाप का प्रभाव जानकर नकार भी दिया जाए, किन्तु गुरुभ्राताओं का शकुंतला के प्रति स्नेह रखलन क्यों? दुष्यंत द्वारा प्रत्याख्यान कर देने पर रोती हुई शकुंतला जब अपने गुरुभ्राताओं का अनुसरण करती है तो वे उसे कठोर वचनों से वहीं रोकते हुए कहते है कि ''यदि यथा वदति क्षितिपस्तथा त्वमसि किं पितुरूकुलया त्वया।

अर्थात राजा दुष्यंत जैसा कहता है यदि तुम वैसी हो तो कुल मर्यादा से भ्रष्ट तुमसे पिता को क्या प्रयोजन है? और यदि अपने आचरण को पवित्र समझती हो तो पति के परिवार में तुम्हारी दासता भी उचित है ?

तनिक विचार कीजिए कि उस समय शकुंतला की क्या दशा हुई होगी, जब एक ओर पति उसका प्रत्याख्यान कर देता है तो दूसरी ओर गुरुजन भी उसका परित्याग कर देते है। इस सम्पूर्ण प्रसंग से आहत शकुंतला के हृदय में केवल यही विचार आता है कि

शकुंतला के अपमा का शेष अध्याय राजगुरु इस नेक सलाह से समाप्त करते है कि यदि ज्योतिषियों के अनुसार शकुंतला चक्रवर्ती पुत्र को जन्म देती है तो दुष्यंत उसे स्वीकार कर लेंगे अन्यथा उसका परित्याग कर देंगे अतः पुत्र जन्म पर्यन्त शकुंतला गुरु–गृह में निवास करे। शकुंतला तो मानो एक जीवित व्यक्तिव न हो, बल्कि कोई निर्जीव वस्तु हो, जिसे स्वयं के विषय में निर्णय लेने का कोई अधिकार ही नहीं है।

दुष्यंत द्वारा प्रत्याख्यान किए जाने के पश्चात् शकुंतला को ऋषि मारीच के आश्रम में रहने के लिये विवश होना पड़ता है जहां वह त्तकालीन समाज में परित्यक्ता नारी के लिए निध ारित यथा आमोद प्रमोद, साज श्रृंगार आदि से विरहित जीवन व्यतीत करती है। वह एकान्तवासिनी होकर अपने पुत्र सर्वदमन का पालन करती है। उसका स्वरूप इतना निरीह और निष्प्रभ हो जाता है कि नाटक के आरंभ में जिस शकुंतला के लिये कहा गया था वही शकुंतला अब अर्थात दो मलिन वस्त्रों को धारण किए हुए नियम पालन के कारण कृश्या मुखवाली एक वेणि को धारण किए हुए है।

*व्याख्याता, संस्कृत विभाग, राजकीय महाविद्यालय, बांदीकुई (राजस्थान)

दुर्वासा शाप की निवृत्ति के पश्चात् दुष्यंत का दुःखी व विरही रूप हमारे समक्ष आता है। शकुंतला के वियोग से अभिभूत दुष्यंत अपने दुःख को ऋतुत्सव का निषेध कर प्रकट करता है। वह अपनी पीड़ा को रात्रि जागरण और अश्रु विलाप के माध्यम से व्यक्त करता है। किन्तु जो यातना और कष्ट शकुंतला ने झेला, उसके समक्ष दुष्यंत का यह शोक–प्रदर्शन कहीं भी औचित्यपूर्ण नहीं है। यद्यपि अंत में दुष्यंत शकुंतला को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर लेता है, किन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या शकुंतला के जीवन के उन अमूल्य वर्षों का मोल कोई चुका सकता है, जो उसने दुष्यंत वियोग में बिताए। शकुंतला ने अपमान और तिरस्कार की जो पीड़ा झेली, उस यंत्रणा से उसे क्या कोई मुक्ति दिला सकता है ? दुष्यंत से निश्छल प्रेम करने की जो भूल शकुंतला ने की, जिसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ा, क्या उसकी भरपाई कोई कर सकता है ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर क्या कोई दे सकता है ? नहीं।

शकुंतला की इस पीड़ा का अनुभव स्वयं रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी किया। उन्होने लिखा कि –

''कालिदास तो पतन, संघर्ष और उत्थान के इस अपूर्व चमत्कारपूर्ण चरित्र की रचना कर अमर हो गए, किन्तु नायिका को क्या मिला ? माता–पिता की अननुभूत आत्मीयता, तपोवन का कठिन जीवन, पति का तिरस्कार राज्य सभा के सम्मुख असहाय यंत्रणा, गुरुभ्राताओं का स्नेह–स्खलन ओर जगत् की समस्त कटु पीड़ा उसके हृदय ओर प्राणों में घुल गयी, तब भी क्या उसने आत्महनन किया ? क्या वह अपने कर्तव्य से स्खलित हुई ? अथवा क्या किसी का उसने अपनमान किया ? क्या आज की किसी आदर्शतम नारी में शकुंतला की वह समता है ? वह सहिष्णुता और कर्तव्य–परायणता है? नहीं, तभी तो शकुंतला अनुपम असाधारण है, अद्वितीय है, मानवीय होते हुए भी दिव्य है, देवी होते हुए भी नारी है।''

सन्दर्भ

1. शास्त्री, प्रभाकर, अभिज्ञानशकुन्तलम
2. चौखम्बा प्रकाशन, अभिज्ञानशकुन्तलम
3. द्विवेदी, डॉ. कपिल देव, संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास
4. वरदाचार्य, संस्कृत साहित्य का इतिहास
5. मिश्र, डॉ0 यदुनन्दन, अभिज्ञानशकुन्तलम